भूषण दूषणवियुक्त । सब महिमायुक्त विकल्प मुक्त ॥ अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप । परमात्म परमपावन अनूप ॥ शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन । स्वाभाविक परिणतिमय अछीन ॥ अष्टादशदोषविमुक्त धीर । सुचतुष्टयमय राजत गभीर ॥ मुनि गणधरादि सेवत महंत । नव-केवललब्धि-रमा धरंत ॥ तुम शासन सेय अ-मेय जीव । शिव गये जाहिं जे हैं सदीव ॥ भव-सागरमें दुख खार-वारि । तारनको और न आप टारि ॥ यह लखि निजदुखगदहरणकाज । तुम ही निमित्तकारण इलाज ॥ जाने, तातैं मैं शरण आय । उचरौं निज दुख जो चिर लहाय । मैं भ्रम्यौ अपनपो विसरि आप । अपनाये वि-धिफल पुण्यपाप ॥ निजको परको करता पि-छान । परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥ आकुलित भयो अज्ञान धारि । ज्यौं मृग मृगतृष्णा जानि वारि ॥ तनपरणातिमें आपो चितारि । कबहूं न अनुभव्यो स्वपदसार ॥ तुमको विन जाने जो

कलेश। पाये सो तुम जानत जिनेश ॥ पशु-नारक-नर-सुर-गति-मझार। भव धर धर मर्यो अनंतवार ॥ अब काललब्धिबलतैं दयाल। तुम दर्शन पाय भयो खुशाल॥ मन शांत भयो मिट सकल द्वंद्व। चाख्यो स्वातमरस दुखनिकंद ॥ तातैं अब ऐसी करहु नाथ। बिछुरै न कभी तुम चरणसाथ ॥ तुम गुणगणको नहिं छेव देव। जगतारनको तुम विरद एव ॥ आतमके अहित विषय कषाय। इनमें मेरी परिणति न जाय ॥ मैं रहूं आपमें आप लीन। सो करो होहुं ज्यों निजाधीन ॥ मेरे न चाह कछु और ईश। रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश ॥ मुझ कारजके कारन सु आप। शिव करहु हरहु मम मोहताप॥ शशि शांतकरन तपहरनहेत। स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवत पियूष ज्यों रोग जाय। त्यों तुम अनुभवतैं भव नसाय ॥ त्रिभुवन तिहुं कालमंझार कोय। नहिं तुम विन निज सुखदाय होय ॥ मो उर यह निश्चय भयो आज। दुखजलधि उतारण तुम जिहाज॥ १६ ॥

दोहा ।

तुम गुणगणमणि गणपती, गणत न पावहिं पार
'दौल' स्वल्पमति किम कहै, नमूं त्रियोग संभार

२

दोहा ।

विश्वभावव्यापी तदपि, एक विमल चिद्रूप ।
ज्ञानानंदमयी सदा, जयवंतौ जिनभूप ॥

चौपई छंद (१५ मात्रा) ।

सफली मम लोचनद्वंद । देखत तुमको जिनचंद
मम तनमन शीतल एम । अम्रतरस सींचत जेम
तुम बोध अमोघ अपारा । दर्शन पुनि सर्वनिहारा
आनंद अतिन्द्रिय राजै । बल अतुलस्वरूप न
त्याजै ॥ इत्यादिक स्वगुन अनन्ता । अन्त-
र्लक्ष्मी भगवंता । बाहिज विभूति बहु सोहै ।
वरनन समर्थ कवि को है ॥ तुम वृच्छ अशोक
सुस्वच्छ । सब शोकहरनको दच्छ ॥ तहं चंच-
रीक गुंजारैं । मानो तुम स्तोत्र उचारैं ॥ शुभ
रत्नमयूख विचित्र । सिंहासन-शोभ पवित्र ॥

तहां वीतराग छवि सोहै । तुम अंतरीछ मन मोहै । वर कुन्दकुन्द-अवदात । चामरव्रज सर्व सुहात ॥ तुम ऊपर मघवा ढारे । धरि भक्ति भाव अघ टारै ॥ मुक्ताफलमालसमेत । तुम ऊर्ध्व छत्र त्रय सेत ॥ मानौं तारान्वित चन्द । त्रय मूर्ति धरी दुतिवृन्द ॥ शुभ दिव्य पटह बहु बाजैं । अतिशयजुत अधिक विराजैं । तुमरौं जस घोकैं मानौं । त्रैलोक्यनाथ यह जानौं ॥ हरिचन्दन सुमन सुहाये । दशदिशि सुगंधि महकाये ॥ अलिपुंज विगुंजत जामैं । शुभ वृष्टि होत तुम सामैं ॥ भामंडल दीप्ति अखंड । छिप जात कोटि मार्तंड ॥ जग लोचनको सुखकारी । मिथ्यातमपटल निवारी ॥ तुमरी दिव्यध्वनि गाजै । विन इच्छा भविहित काजै ॥ जीवादिक तत्वप्रकाशी । भ्रमतमहर सूर्यकलासी इत्यादि विभूति अनंत । बाहिज अतिशय अरहंत ॥ देखत मम भ्रमतम भागा । हित अहित ज्ञान उर जागा ॥ तुम सबलायक उप-

गारी । मैं दीन दुखी संसारी ॥ तातैं सुनिये यह अरजी । तुम शरन लियौ जिनवरजी ॥ मैं जीवद्रव्य विनअंग । लागौ अनादि विधि संग ॥ तो निमित पाय दुख पाये । हम मिथ्यातादि महा ये । निज गुन कबहूं नहिं माये। सब परपदार्थ अपनाये । रति अरति करी सुखदुखमैं । है करि निजधर्मविमुख मैं ॥ परचाह दाह नित दाहौ । नहिं शांतसुधा अवगाहौ ॥ पशु नारक नर सुरगतमें । चिर भ्रमत भयौ भ्रममतमें ॥ कीने बहु जामन मरना । नहिं पायो सांचौ शरना । अब भाग उदय मो आयौ । तुम दर्शन निर्मल पायौ ॥ मन शांत भयौ उर मेरो । बाढौ उछाह शिवकेरो ॥ परविषयरहित आनन्द । निज रस चाख्यौ निर्द्वंद ॥ मुझ काजतनैं कारन हो । तुम देव तरन तारन हो ॥ तातैं ऐसी अब कीजे । तुम चरन-भक्ति मोहि दीजे ॥ दृग-ज्ञान-चरन परिपूर । पाऊं निश्चय भवचूर ॥ दुखदायक विषय

कषाय । इनमें परिनाति नहिं जाय ॥ सुरराज समाज न चाहों । आतम-समाधि अवगाहौं । पर इच्छा मो मनमानी । पूरो सब केवलज्ञानी ॥

। दोहा ।

गनपति पार न पावहीं, तुम गुनजलधि विशाल
भागचन्द्र तुव भक्ति हो, करै हमें वाचाल ॥

हरिगीतिका (२८ मात्रा) ।

तुम परम पावन देव जिन, अरि-रज-रहस्य विनासनं । तुम ज्ञान-दृग-जलबीच त्रिभुवन, कमलवत प्रतिभासनं, आनन्द निजज अनन्त अन्य, अचिंत संतत परनये । बल अतुल कलित स्वभावतैं नहिं, खलित गुन अमिलित थये ॥ सब राग रुष हन परम श्रवन, स्वभाव घन निर्मल दशा । इच्छारहित भवहित खिरत वच सुनत ही भ्रमतम नशा । एकान्त-गहन-सुदहन स्यात्पद, -वहनमय निजपर दया । जाके प्रसाद विषाद विन, मुनिजन सपदि शि-

वपद लह्या ॥ भूषण वसन सुमनादिविन तन, ध्यानमय मुद्रा दिपै । नासाग्र नयन सुपलक न ह्लय न, तेज लखि खगगन छिपै ॥ पुनि वदन निरखत प्रशम जल, वरषत सुहरषत उर धरा । बुद्धि स्वपर परखत पुन्यआकर, कलिकलिल दुरखत जरा ॥ इत्यादि बाहिरंतर असाधारन सुविभवनिधान जी । इन्द्रादिवंत पदारविंद अनिंद तुम भगवानजी ॥ मैं चिरदुखी परचाहतैं, तुम धर्म नियत न उर धरौ ॥ परदेवसेव करी बहुत, नहिं काज एक तहां सरो ॥ अब भागचन्द्रउदय भयौ, मैं शरन आयौ तुमतने । इक दीजिये वरदान तुम जस, स्वपददायक बुध भने ॥ परमाहिं इष्ट अनिष्ट-मति तजि, मगन निज गुनमें रहौं । दृग-ज्ञान-चर संपूर्ण पाऊं, 'भागचंद' न पर चहौं ॥ ३ ॥

४

पुलकन्त नयन चकोरपक्षी, हँसत उर इंदीवरौ दुर्बुद्धि चकवी बिलखि बिछुरी, निबिड मिथ्या-

तम हरौ ॥ आनन्द अम्बुज उमगि उछर्यौ, अखिल आतप निरदले। जिनवदन पूरनचंद्र निरखत, सकल मनवांछित फले ॥ मुझ आज आतम भयौ पावन, आज विघ्न विनाशियौ। संसारसागर नीर निवर्यौ, अखिल तत्त्व प्रकाशियौ। अब भई कमला किंकरी मुझ, उभय भव निर्मल ठये। दुख जरौ दुर्गतिवास निवरौ, आज नवमंगल भये ॥ २ ॥ मनहरन मूरति हेरि प्रभुकी, कौन उपमा लाइये। मम सकल तनके रोम हुलसे, हर्ष ओर न पाइये ॥ कल्याणकाल प्रतच्छ प्रभुको, लखैं जो सुरनर घने। तिस समयकी आनन्दमहिमा, कहत क्यों मुखसौं बने ?॥ ३ ॥ भर नयन निरखे नाथ तुमको, और वांछा ना रही। मन ठठ मनोरथ भये पूरन, रंक मानौं निधि लही ॥ अब होय भव भव भक्ति तुम्हरी, कृपा ऐसी कीजिये। कर जोर 'भूधरदास' विनवे, यही वर मोहि दीजिये ॥ ४ ॥

५

तुम तरन तारन भवनिवारन, भविक–मन आनन्दनो। श्रीनाभिनन्दन जगतवन्दन, आदिनाथ जिनिन्दनो॥ तुम आदिनाथ अनादि सेऊं, सेय पद पूजा करौं। कैलाशगिरिपर ऋषभ जिनवर, चरणकमल हृदय धरौं॥ अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली। यह जानकर तुम शरण आयौ, कृपा कीजे नाथजी॥ तुम चन्द्रवदन सुचन्द्रलक्षण, चन्द्रपुरीपरमेशजू। महासेननन्दन जगतवंदन, चन्द्रनाथजिनेशजू॥ २॥ तुम बाल ब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमलप्रकाशनो। श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो॥ तुम तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या वश करी। चारित्ररथ चढि भये दूलह, जाय शिवसुन्दरि वरी॥ ३॥ इन्द्रादि जन्मस्नान जिनके, करन कनकाचल चढे। गंधर्वदेवन सुयश गाये अपसरा मंगल पढे॥ इह विधि सुरासुर निजनि-

योगी, सकल सेवाविधि ठही । ते पार्श्वप्रभु मो आस पूरो चरणसेवक हों सही ॥ ४ ॥ तुम ज्ञानरवि अज्ञानतमहर. सेवकन सुख देत हो। मम कुमतिहारन सुमतिकारन दुरित सब हर लेत हो । तुम मोक्षदाता कर्मघाता. दीन जानि दयाकरौ । सिद्धार्थनन्दन जगतवन्दन. महावीरजिनेश्वरो ॥ ५ ॥ चौवीस तीर्थंकर सुजिनको. नमत सुरनर आयके॥ मैं शरण आयौ हर्ष पायो. जोर कर सिर नायके ॥ तुम तरन तारन हो प्रभूजी. मोहि पार उतारियौ । मैं हीन दीनदयालु प्रभुजी. काज मेरो सारियौ॥ यह अतुल महिमासिन्धु साहब. शक्र पार न पावही। तजि हास्य भय तुम दास 'भूधर' भक्तिवशजस गावही ॥ ७ ॥

६

गुरुविनती

वंदौं दिगंबरगुरुचरन. जग तरन तारन जान। जे भरम भारी रोगको. हैं राजवैद्य महान॥

जिनके अनुग्रह विन कभी. नहिं कटै कर्म जं-जीर। ते साधु मेरे मन वसौ. मेरी हरौ पातक पीर ॥ १ ॥ यह तन अपावन अशुचि है संसार सकल असार। ये भोग विषपकवानसे. इस भांति सोच विचार ॥ तप विराचि श्रीमुनि वन वसे. सब त्यागि परिग्रहभीर। ते साधु मेरे मन वसौ. मेरी हरौ पातक पीर ॥ २ ॥ जे काच कंचन सम गिनैं. अरि मित्र एक सरूप। निंदा बडाई सारिखी. वनखंड शहर अनूप। सुख दुःख जीवन मरनमें. नहिं खुशी नहिं दिल-गीर। ते साधु मेरे मन वसौ. मेरी हरौ पातक पीर ॥ ३ ॥ जे बाह्य परवत वन वसैं. गिरि गुहा महल मनोग। सिल सज समता सहचरी। शशिकिरण दीपकजोग ॥ मृग मित्र भोजन तपमई. विज्ञान निरमल नीर। ते साधु मेरे मन वसौ, मेरी हरौ पातक पीर ॥ ४ ॥ सूखैं सरोवर जल भरे. सूखैं तरंगनि-तोय। वाटैं बटोही ना चलैं. जहँ घाम गरमी होय ॥ तिस

काल मुनिवर तप तपैं. गिरिशिखर ठाढे धीर।
ते साधु मेरे मन वसौ. मेरी हरौ पातक पीर ॥५॥
घनघोर गरजैं घनघटा, जल परै पावसकाल।
चहुंओर चमकै बीजुरी. अति चलै शीतल ब्यार। तरुहेट तिष्ठै जब जती, एकान्तअचल शरीर। ते साधु मेरे मन वसौ, मेरी हरौ पातक पीर ॥ ६ जब शीतमास तुषारसौं, दाहै सकल वनराय। जब जमै पानी पोखरां, थरहरै सब-की काय ॥ तब नगन निवसैं चौहटैं, अथवा नदीके तीर। ते साधु मेरे मन वसौ, मेरी हरौ पातक पीर ॥ ७ ॥ कर जोर 'भूधर' बीनवै, कब मिलैं वे मुनिराज। यह आस मनकी कब फलै, मेरे सरैं सगरे काज ॥ संसार विषम वि-देशमें, जे विनाकारण वीर। ते साधु मेरे मन वसौ, मेरी हरौ पातक पीर ॥ ८ ॥

७

चौपई (१६ मात्रा)

जे जगपूज परमगुरु नामी । पतितउधारन

अंतरजामी ॥ दास दुखी तुम अति उपगारी। सुनिये प्रभु ! अरदास हमारी ॥ यह भव घोर समुद्र महा है। भूधर भ्रम-जल-पूर रहा है ॥ अंतर दुख दुःसह बहुतेरे। ते बडवानल साहिब मेरे ॥ जनम जरा गद मरन जहां है। ये ही प्रबल तरंग तहां है ॥ आवत विपति नदीगन जामें। मोह महान मगर इक तामें ॥ तिस मुख जीव पर्यौ दुख पावै। हे जिन ! तुमविन कौन छुडावै ॥ अशरन शरन अनुग्रह कीजै। यह दुख मेटि मुकति मुझ दीजै ॥ दीरघ काल गयो विललावैं। अब ये सूल सहे नहिं जावैं ॥ सुनियत यौं जिनशासनमांहीं। पंचमकाल परमपद नाहीं ॥ कारन पांच मिलैं सब सारे ॥ तब शिव सेवक जाहिं तुम्हारे ॥ तातैं यह विनती अब मेरी। स्वामी ! शरण लई हम तेरी ॥ प्रभु आगैं चितचाह प्रकासौं। भव भव श्रावककुल अभिलासौं ॥ भव भव जिन आगम अवगाहौं। भव भव भक्ति शरणकी चाहौं ॥ भव

भवमें सतसंगति पाऊं। भव भव साधुनके गुन गाऊं॥ परनिंदा मुख भूलि न भाखूं। मैत्री-भाव सबनसों राखूं॥ भव भव अनुभव आतमकेरा। होहु समाधिमरण नित मेरा॥ जबलौं जनम जगतमें लाधौं। काल-लबधि-बल लहि शिव साधौं॥ तबलौं ये प्रापति मुझ हूजौ। भक्तिप्रताप मनोरथ पूजौ॥ प्रभु सब समरथ हम यह लोरैं। 'भूधर' अरज करत कर जोरैं॥

८

त्रिभुवनगुरु स्वामी जी, करुनानिधि नामी जी। सुनि अंतरजामी, मेरी विनती जी॥ १॥ मैं दास तुम्हारा जी. दुखिया बहु भाराजी। दुख मेटनहारा. तुम जादौंपती जी॥ २॥ भरम्यौ संसारा जी. चिर विपति-भंडारा जी, कहिं सार न सारे. चहुंगति डोलियौ जी॥३॥ दुख मेरु समाना जी। सुख सरसों-दाना जी। अब जान धरि ज्ञान, तराजू तोलिया जी॥ ४॥ थावर तन पाया जी। त्रसनाम ध-

राया जी. कृमि कुंथु कहाया. मरि भँवरा भया जी ॥ ५ ॥ पशुकाया सारी जी। नाना विधि धारी जी । जलचारी थलचारी. उडन पखेरुवा जी ॥ ६ ॥ नरकनके माहीं जी. दुख ओर न काहीं जी। अति घोर जहां है. सरिता खारकी जी ॥ ७ ॥ पुनि असुर संघारैं जी, निज वैर विचारैं जी। मिल बांधे अरु मारैं. निरदय नारकी जी ॥८॥ मानुष अवतारै जी. रह्यौ गरभमंझारै जी। रटि रोयौ जनमत. वारैं मैं घनों जी ॥९॥ जोवन तन रोगी जी. कै विरहवियोगी जी। फिर भोगी बहुविधि. विरधपनाकी वेदना जी ॥ १० ॥ सुरपदवी पाई जी। रंभा उर लाई जी। तहां देखि पराई. संपति झूरियौ जी ॥ ११ ॥ माला मुरझानी जी. जब आरति ठानी जी। स्थिति पूरन जानी. मरत विसूरियौ जी ॥ १२ ॥ यौं दुख भवकेरा जी. भुगतौ बहुतेरा जी । प्रभु! मेरे कहतैं, पार न है कहीं जी ॥ मिथ्यामदमाता

जी, चाहीं नित साता जी । सुखदाता जग-त्राता, तुम जाने नहीं जी ॥ प्रभु भागनि पाये जी, गुण श्रवण सुहाये जी । तकि आयौ सब सेवककी, विपदा हरौ जी ॥ भववास वसेरा जी, फिरि होय न मेरा जी । सुख पावै जन तेरा, स्वामी सो करौ जी ॥ तुम शरनसहाई जी, तुम सज्जन भाई जी । तुम भाई तुम्हीं बाप दया मुझ लीजिये जी ॥ 'भूधर' कर जोरे जी, ठाडो प्रभु ओरे जी । निजदास निहार, निरभय कीजिये जी ॥

९

ढाल परमादी ।

अहो जगतगुरु एक, सुनियो अरज हमारी । तुम प्रभु ! दीनदयाल, मैं दुखिया संसारी ॥ इस भववनके मांहि, काल अनादि गमायो । भ्रमत चहूंगतिमांहि, सुख नहिं दुख बहु पायो ॥ कर्म महारिपु जोर, एक न कान करै जी । मनमानौ दुख देहिं, काहूसो न डरैं जी ॥ कबहूं इतर

निगोद, कबहूं नरक दिखावैं । सुर नर पशु-गतिमाहिं, बहुविधि नाच नचावैं ॥ प्रभु! इनके परसंग, भव भवमाहिं बुरे जी । जो दुख देखे देव ! तुमसौं नाहिं दुरे जी ॥ एक जनमकी बात, कहि न सकौं सुनि स्वामी । तुम अनंत परजाय, जानत अंतरजामी ॥ मैं तो एक अ-नाथ, ये मिलि दुष्ट घनेरे । कियौ बहुत बेहाल सुनियौ साहिब मेरे ॥ ज्ञान महानिधि लूटि, रंक निबल करि डार्यो । इनहीं तुम मुझमाहिं हे जिन ! अंतर पार्यो ॥ पाप पुण्य की दोय, पांयनि बेडी डारीं । तनकारागृहमांहि, मोहि दियो दुख भारी ॥ इनको नेक बिगार, मैं कछु नाहिं कियौ जी । बिन कारन जगवंद्य, बहु-विधि बैर लियौ जी ॥ अब आयो तुम पास, सुन जिन सुजस तिहारौ । नीति निपुन महा-राज, कीजे न्याव हमारौ ॥ दुष्टनि देहु निकास साधुनिकौं रखि लीजे । विनवै 'भूधरदास' हे प्रभु ढील न कीजे ॥

१०

दोहा (रागभरथरी)

ते गुरु मेरे मन वसौ, जे भव-जलधि-जिहाज ।
आप तिरैं पर तारहीं, ऐसे श्रीऋषिराज ॥
तेगुरु० ॥ मोह महारिपु जीतिकैं छाड्यो सब घर
वार । होय दिगम्बर वन बसैं, आतम शुद्ध
विचार ॥ ते गु० ॥ रागउरग बिल वपु गिण्यौं,
भोग भुजंग समान । कदलीतरु संसार है,
त्यागौ सब यह जान । ते गुरु० । रतनत्रय निधि
उर धरैं, अरु निरग्रंथ त्रिकाल । मार्यौ काम
खवीसको, स्वामी परम दयाल ॥ ते गु० ॥ पंच
महाव्रत आदरैं, पांचौं सुमिति समेत । तीन गु-
पति पालैं सदा, अजर अमरपदहेत ॥ ते गु०॥
धर्म धरैं दशलक्षणी, भावैं भावना सार । सहैं
परीषह बीस द्वै, चारित-रतन भंडार । ते गु० ॥
जेठ तपै रवि आकरौ, सूखैं सरवरनीर । शैल
शिखर मुनि तप तपैं, दाहैं गगन शरीर ॥ ते
गु० ॥ पावस रैन डरावनी, वरसै जलधर धार ।

तरुतल निवसैं साहसी, बाजै झंझावार ॥ ते गु०
शीत पडे कपि-मद गलै, दाहै सब वनराय ।
ताल तरंगनिके तटै, ठाडे ध्यान लगाय ॥ ते
गुरु० ॥ इहि विधि दुद्धर तप तपैं, तीनौं काल
मझार । लागे सहज सरूपमें, तनसौं ममत
निवार ॥ ते गुरु० ॥ पूरव भोग न चिंतवैं,
आगम बांछा नाहिं । चहुंगतिके दुखसौं डरैं,
सुरत लगी शिवमाहिं ॥ ते गु० ॥ रंगमहलमें
पौढते, कोमल सेज बिछाय । ते पच्छिम नि-
शि भूमिमें, सोवैं संवरि काय ॥ ते गु० ॥ गज
चढि चलते गरबसौं, सेना सजि चतुरंग । नि-
रखि निरखि पग वे धरैं, पालैं करुणा अंग ॥
ते गुरु० ॥ वे गुरु चरण जहां धरैं, जगमें ती-
रथ जेह । सो रज मम मस्तक चढौ, 'भूधर' मांगे
येह ॥ ते गु० ॥

११

करुणा ल्यो जिनराज हमारी, करुणा ल्यो ॥
टेक ॥ अहो जगतगुरु जगपती, परमानंदनि-

थान । किंकरपर कीजे दया, दीजे अविचल थान ॥ हमारी० ॥ भवदुखसौं भयभीत हौं, शिवपद वांछा सार । करौ दया मुझ दीनपै, भवबंधन निरवार ॥ ह० ॥ पर्यो परम भव कूपमें, हे प्रभु काढौ मोहि । पतित उधारण हो तुम्हीं, फिर फिर विनऊं तोहि ॥ ह० ॥ तुम प्रभु परम दयाल हो, अशरणके आधार । मोहि दुष्ट दुख देत हैं, तुमसौं करहुं पुकार ॥ ह० ॥ दुःखित देखि दया करै, गांवपती इक होय । तुम त्रिभुवनपति कर्मतैं क्यों न छुडावौ मोय ह० ॥ भव-आताप तबै भजै, जब राखौं उर धोय । दया-सुधा करि सीयरा, तुम पदपंकज दोय ॥ ह० ॥ येही इक मुझ वीनती, स्वामी ! हर संसार । बहुत धज्यौ हूं त्रासतैं, विलख्यौ बारंवार ॥ ह० ॥ पदमनंदिको अर्थ लै, अरज करी हितकाज । शरणागत भूधर तनी, राखौ जगपति लाज ॥ हमारी० ॥

सोरठा।

पारसप्रभुको नाउं, सार सुधारस जगतमें।
मैं याकी बलि जाउं, अजर अमरपदमूल यह॥

हरिगीता (१८ मात्रा)

राजत उतंग अशोक तरुवर, पवन प्रेरित थर-
हरै। प्रभु निकट पाय प्रमोद नाटक, करत मानौं
मनहरै॥ तिस फूलगुच्छन भ्रमर गुंजत, यही
तान सुहावनी। सो जयौ पार्श्वजिनेन्द्र पासक
हरण, जगचूडामनी। टेक०॥ निज मरन देखि
अनंग डरप्यौ, शरण ढूंढत जग फिरौ। कोई
न राखै चोर प्रभुको, आय पुनि पांयन गिरौ।
यौं हार निज हथियार डारे, पुहपवर्षा मिस
भनी। सो जयौ०॥ प्रभु अंग नील उतंग गि-
रितैं, वानि शुचि सीता ढली। सो भेदि भ्रम
गजदंत पर्वत, ज्ञान सागरमें रली॥ नय सप्त-
भंग-तरंग-मंडित, पापतापविध्वंसनी। सो
जयौ०॥ चंद्रार्चिचय छवि चारु चंचल, चमर-

वृन्द सुहावने। ढोलैं निरंतर यक्षनायक, कहत क्यों उपमा बने॥ यह नील गिरिके शिखर मानौं, मेघझर लागी घनी। सो जयौ०॥ हीरा जवाहिर खचित बहुविध, हेमआसन राजए। तहं जगत जनमनहरन प्रभु तन, नील वरन विराजए। यह जटित वारिज मध्य मानो, नीलमणि कलिका बनी। सो जयौ०॥ जग-जीत मोह महान जोधा, जगतमें पटहा दियौ। सो शुकलध्यान कृपान बल, जिन विकट वैरी वश कियौ॥ ये बजत विजय निशान दुंदुभि जीत सूचैं प्रभुतनी॥ सो जयौ०॥ छद्मस्थ पदमें प्रथम दर्शन, ज्ञान चारित आदरे। अब तीन तेई छत्र छलसों, करत छाया छवि भरे॥ अति धवलरूप अनूप उन्नत, सोमविंब प्रभा हनी। सो जयौ०॥ दुति देखि जाकी चंद सरमै, तेजसों रवि लाजए। अब प्रभामंडल जोग जगमें कौन उपमा छाजए॥ इत्यादि अतुल विभूतिमंडित, सोहिये त्रिभुवनधनी॥ सो

जयो० ॥ यौं असम महिमासिंधु साहब, शक्र पार न पावहीं । तव हासमय तुम दास 'भूधर' भगतिवश यश गावहीं ॥ अब होउ भवभव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहौं । कर जोरि यह वरदान मांगौं, मोखपद जावत लहौं ॥ १० ॥

१२

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरन आयो शरन जी । यौं विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरन जी ॥ तुम ना पिछान्यो आन मान्यो देव विविध प्रकार जी । या बुद्धिसेती निज न जाण्यो, भ्रम गिण्यो हितकार जी ॥ भवविकट वनमैं करम वैरी, ज्ञानधन मेरो हर्यो । तव इष्ट भूल्यौ भ्रष्ट होय, अनिष्टगति धरतौ फिर्यौ । धन घडी यौ धन दिवस यौं ही, धन जनम मेरो भयो । अब भाग मेरो उदय आयो दरश प्रभुको लख लयो ॥ छवि वीतरागी नगनमुद्रा, दृष्टि नासापै धरैं । वसु प्रातिहार्य अनन्तगुणयुत, कोटिरविछविकौं हरैं ॥ मिटि गयो तिमिर

मिथ्यान्ध मेरो, उदय रवि आतम भयौ । मो उर हरष ऐसौ भयो मनो, रंक चिंतामणि लयौ ॥ मैं हाथ जोड नवाय मस्तक, वीनऊं तुव चरन जी । सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनो तारन तरन जी ॥ जांचू नहीं सुरवास पुनि नरराज परिजन साथ जी । बुध जांचहूं तुव भक्ति भव भव, दीजिये शिवनाथ जी ॥

१४

दोहा ।

गुणसमुद्र लखि रूप तुम, हुलसौ चित्त अपार ।
अब मो हृदय रहो सदा, निर्विकल्प अविकार ॥

पद्धडी छंद ।

राजत स्वभावमय त्याग आन । उपकारी सब जीवन सुजान ॥ आनन्दरूप नित रहैं आप । तज दिये सर्वविधि पुण्य पाप ॥ सामान्य विशेषगुणात्म शुद्ध । स्वचतुष्टययुत राजत सुबुद्ध ॥ त्रैकाल्य अर्थ परजाय जान । हो वीतराग सब भर्म भान ॥ शुद्धातमरस आस्वाद लेत । आकु-

लता विन सव सुख समेत ॥ लहि स्वच्छ स्व-
छन्द अमंद ज्ञान । लोक रु अलोक जानौ
प्रमान ॥ स्वाभाविक संपति देनहार । स्वय-
मेव करन जीवन उद्धार ॥ प्रभु तुम सरूप लखि
धरत धीर। मैं दुखी भयो मो सुनो पीर ॥ भर-
मौं अनादि अज्ञान धार । सुख मानौं परसे
प्रीति पार ॥ इन्द्रियोंजनित सुख लीन होय ।
सब विधि आपनको दयौ खोय ॥ प्रिय त्रिय
सुत मात पिता सुदेख । अपने मानें कारण वि-
शेष ॥ पर्याय बनी असमान जाति । विन भेद
लिये यह सव सुहात ॥ मैं करौं कहा कछु ना
वसाय । विधि जोग पाय सुधि विसर जाय ॥
तुमसौं कबलौं कहिये सुजान । जानते स्वपर
परनाति प्रमान ॥ मैं सहौं दुःख सो हरो नाथ ।
अब ही कीजे निज चरण साथ ॥ तुम सब
लायक ज्ञायक उदार । रत्नत्रय सम्पति देनहार ॥
उपकारी तुम विन नहीं कोय । तुमहीसे यह
विधि हो सहोय ॥ मैं विरद सुनी आद्वितीय एक ।

आपन सम कर तारे अनेक ॥ यह विरदधार मुझे तार देव । उपकार उचित हो करौ एव ॥ हो ज्ञानानंदसरूप धार । रागादिकसे मुहि करौ उद्धार ॥ मो चाह रही ना कछू और, मैं चाहत हौं निज भाव दौर ॥ महिमा दीखै अद्भुत जिनेश । इच्छा पूरत ना कष्ट लेश ॥ मुझ अंतरंग उपजी जो चाह । सो तुम विन निज कहौं पीर काह ॥ सुख लहौं स्वसंवेदन जु आप । अब देहु मिटै सब मोहताप ॥

दोहा ।

सब विधि समरथ हो प्रभू, मैं विधिवस हौं दीन ।
चरण शरण निज जानके, 'उदय' करौ स्वाधीन ॥

१५

भुजगप्रयात छंद ।

नरेंद्रं फणीन्द्रं सुरेन्द्रं अधीसं । शतेन्द्रं सुपूजैं भजैं नाय शीसं ॥ मुनींद्रं गणेंद्रं नमैं जोडि हाथं । नमों देवदेवं सदा पार्श्वनाथं ॥ गजेंद्रं मृगेंद्रं गह्यो तू छुडावै । महा आगतैं नागतैं

तू बचावै ॥ महावीरतैं युद्धमें तू जितावै । महा-
रोगतैं बंधतैं तू खुलावै ॥ दुखी-दुःखहर्त्ता सुखी-
सुक्खकर्त्ता । सदा सेवकोंको महानंदभर्त्ता ॥
हरे यक्ष राक्षस भूतं पिशाचं । विषं डांकनी
विघ्नके भय अवाचं । दरिद्रीनको द्रव्यके दान
दीने । अपुत्रीनको तू भले पुत्र कीने ॥ महा
संकटोंसे निकारै विधाता । सबै सम्पदा सर्वको
देहि दाता ॥ महाचोरकौ वज्रकौ भय निवारै ।
महापौनके पुंजतैं तू उबारै ॥ महाक्रोधकी अ-
ग्निको मेघधारा । महालोभ शैलेशको वज्र
मारा ॥ महामोह अन्धेरको ज्ञानभानं । महाकर्म
कांतारको दौ प्रधानं ॥ किये नाग नागिनि
अधोलोकस्वामी । हरो मान तू दैत्यको हो
अकामी ॥ तुही कल्पवृक्षं तुही कामधेनं । तुही
दिव्यचिंतामणी नाग एनं ॥ पशू नर्कके दुःखसे
तू छुडावै । महास्वर्गमें मुक्तिमें तू बसावै ॥ करै
लोहको हेमपाषाण नामी । रटै नाम सो क्यों
न हो मोक्षगामी ॥ करै सेवै ताकी करैं देव

सेवा। सुने वैन सो ही लहै ज्ञानमेवा ॥ जपै जाप ताको नहीं पाप लागैं। धरै ध्यान ताकै सबै दोष भाजैं॥ विना तोहि जानैं धरे भव घनेरे। तुम्हारी कृपातैं सरैं काज मेरे॥

दोहा।

गणधर इन्द्र न कर सकैं, तुम विनती भगवान।
'द्यानत' प्रीत निहारकै, कीजै आप समान॥

१६

हरिगीता।

मंगलसरूपी देव उत्तम, तुम शरण्य जिनेश जी। तुम अधमतारण अधम मम लखि, मेंट जन्म-कलेश जी। तुम मोह जीत अजीत, इच्छातीत शर्मामृत भरे। रजनाश तुम वर-भास दृग नभ, ज्ञेय सब इक उडु चरे॥ गट रास क्षति अति अमित वीर्य, सुभाव अटल-सरूप हो। सब रहित दूषण त्रिजगभूषण, अज अमल चिद्रूप हो॥ इच्छा विना भवि-भाग्यतैं तुम ध्वनि सु होय निरक्षरी। षट्द्रव्य गुणपर्यय

अखिलयुत, एक क्षणमें उच्चरी ॥ एकांतवादी कुमतिपक्ष,—विलिप्त—इभध्वनिमदहरी । संशय-तिमिरहर रविकला, भव-शस्यकौं अमृतझरी॥ वस्त्राभरण विन शांतिमुद्रा, सकलसुरनरमन हरै । नासाग्रदृष्टि विकारवर्जित, निरखि छवि संकट टरै ॥ तुम चरण पंकजनखप्रभा, नभ कोटिसूर्यप्रभा धरैं । देवेंद्र नाग नरेंद्र नमत सु, मुकुटमणिद्युति विस्तरैं ॥ अंतर वहिर इत्यादि लक्ष्मी, तुम असाधारण लसे । तुम जाप पाप-कलाप नासे, ध्यावतैं शिवथल वसे ॥ मैं सेय कुदृग कुबोध अव्रत, चिर भ्रमौं भव वन सबै। दुख सहे सर्व प्रकार गिरिसम, सुख न सर्षप सम कबै ॥ पर चाह दाह दहौ सदा, कबहूं न साम्यसुधा चखौ । अनुभव अपूरव स्वादुविन नित, विषयरस चारौ भखौ ॥ अब बसौ मो उरमें सदा प्रभु, तुम चरणसेवक रहौं । वर भक्ति अतिदृढ होहु मेरे, अन्य विभव नहीं चहौं ॥ एकेन्द्रियादिक अन्त ग्रीवक, तक तथा अंतर

धनी। पर्याय पाय अनन्तवार, अपूर्व सो नहिं शिवधनी ॥ संसृति भ्रमणतैं थकित लखि, निज दासकी सुन लीजिये। सम्यक्‌दरश वर ज्ञान चारित, पथ 'विहारी' कीजिये ॥ ६ ॥

१७

दोहा ।

ज्ञानानंद अनंत शिव, अर्हन् मंगलमूल ।
कलिलकुलाचल तोड कर, हरौ नाथ भवसूल ॥
तुम शिवमग-नेतार हो, भेत्ता कर्मपहार ।
विश्वतत्त्वज्ञाता परम, लो सुधि वेग हमार ॥
तुम त्रिभुवनके भानु हो, मैं खद्योत समान ।
कैसैं तुम गुण वरनऊं, अल्प मतिनकी वान ॥
हृदयभक्ति प्रेरक भई, बल कर पकरे कान ।
ला पटक्यौ पदकमल विच, सकल जगतगुरु जान
तुम अनंत गुणआगरे, पटतर अवर न कोय ।
तुम वाणीतैं जानिये, जो कछु जगमें होय ॥
भूत भविष्यत कालकी, षट द्रव्यन परजाय ।
वर्तमान सम तुम लखौ, हस्तामलक सुभाय ॥

सकल चराचर जगतथित, ज्ञानमुकर रहि सूज।
तातैं तुम अर्हंत हो, सकल जगत करि पूज ॥
तुमतैं गणधरने सुन्यौ, चहुंगतिमय संसार।
तातैं तुम हो परमगुरु, पतितउधारनहार ॥
वीतराग सर्वज्ञ तुम, तारण तरण महान।
तातैं तुमरे वचन प्रभु, हैं षटमत परधान ॥
धरम अहिंसा तुम कह्यो, जहं हिंसा तहं पाप।
दयावंत भवजल तिरैं, पापी जगसंताप ॥
जीवदयागुण बेलडी, बोई ऋषभ जिनेश।
षटदर्शनमंडप चढी, सींची भरत नृपेश ॥
मिथ्या वचन अनादरे, तुमने हे जगसेत।
तातैं झूठनकी झरत, जहां तहां सिर रेत ॥
सत्य धर्मतैं होत है, त्रिभुवनमें परतीत।
सततैं गोला लोहका, होय तुषार प्रतीत ॥
चोरी तुम वर्जन करी, परम पाप लखि धीर।
त्यागी पद पद पूजिये, चोर सहैं बहु पीर ॥
अनाचार वर्जन कियौ, ग्रहन करन कह्यौ शील
जिन धारो सो जग तिरे, जिन छाडौं कढी कील

शील शिरोमणि जगतमें, यासम धर्म न और।
अग्नि होय जल परिनवै, विष हो अमृतकौर॥
खड्ग माल ह्वै परिणवै, सूल सेज मखतूल।
आधिव्याधि आवै नहीं, शीलवंत ढिंग मूल॥
भवतृष्णा दुखदायिनी, भाषी तुम भगवान।
त्यागी त्रिभुवनपति भये, रागी नरक निदान॥
देव धर्म गुरु हो तुम्हीं, ज्ञान ज्ञेय ज्ञातार।
ध्यान ध्येय ध्याता तुम्हीं, हेयाहेयविचार॥
कारन हो शिवपंथके, उद्धारक जगकूप।
कारज सारन जीवके, हो तुम ही शिवभूप॥
उत्तमजन बहु जगततैं, तारे तुम भगवान।
अधम न तारो एक मैं, तारो हे जग-जान॥
आयो तुमपद पूजने, भजन करनके चाव।
राखो भव भव भजनमें, जब लग जग-भरमाव॥
भजन करत संसारसुख, भजन करत निरवान।
भजन विना नर जगतमें, है तिर्यंच समान॥
भजन करत जग उद्धरे, सिंह नकुल कपि सूर।
गणधर हो वृषभेशके, मुक्त भये अघचूर॥

निर अंजन अंजन भये, गज किरात भये सिद्ध
श्वान जटा पन्नग तिरे, तिनकी कथा प्रसिद्ध ॥
कहां पशूपरजाय नर, कहां मुक्तिको धाम ।
तू भी मूरख भजन कर, मुखमें भली न चाम ॥
या जग विषम विदेशमें, बंधु भजन भगवान ।
सार्थवाह निर्वृत्तिको, लखि निश्चय उर आन ॥
भजन वादि जिनभक्ति विन, भक्ति वादि विन
भाव । भाव वादि अवगाढ विन, गाढ वादि
विन चाव ॥ धन्य मुहूरत धन घडी, धन्य
दिवस जिन । आज । तरस तरस कारन जुडौ,
श्रीजिनभजन समाज ॥ रहौ सदा शैली सुखी,
रहौ सदा सतसंग । जातैं श्रीजिनभजनमें, प्रति
दिन होय उमंग ॥ धन्य पुरुष सज्जन मिले, भये
सहायक धर्म । भजन करौ भगवंतको, राखि
सरस्वति सर्म ॥ तू केवलउद्योतकी, परमज्योति
तमहार । 'नयनानन्द' गरीबकी, यह विनती
उर धार ॥

१८

चौपई।

प्रभु इस जग समरथ ना कोय। जासों तुम जस वर्णन होय॥ चार ज्ञान धारी मुनि थकैं। हमसे मंद कहा कर सकैं॥ यह उर जानत निश्चय कीन। जिनमहिमावर्णन हम हीन॥ पर तुम भक्तिथके वाचाल। तिस वस होय गुहूं गुणमाल॥ जय तीर्थंकर त्रिभुवनधनी। जय चन्द्रोपम चूडामनी॥ जय जय परम धरम दातार। कर्मकुलाचल चूरनहार॥ जय शिवकामिनिकन्त महन्त। अतुल अनंत चतुष्टयवंत॥ जय जय आश-भरन बडभाग। तपलक्ष्मीके सुभग सुहाग॥ जय जय धर्मध्वजाधर धीर। स्वर्ग-मोक्षदाता वर वीर॥ जय रत्नत्रय रत्न करंड। जय जिन तारन तरन तरंड॥ जय जय समोसरनश्रृंगार। जय संशयवनदहन तुषार॥ जय जय निर्विकार निर्दोष। जय अनंतगुणमाणिककोष॥ जय जय ब्रह्मचर्य दल

साज, कामसुभटविजयी भटराज। जय जय मोहमहातरु करी। जय जय मदकुंजरकेहरी॥ क्रोधमहानलमेघ प्रचंड। मान-महीधर दामिनिदंड॥ मायाबेलि धनंजय दाह। लोभसलिलशोषण दिननाह॥ तुम गुणसागर अगम अपार। ज्ञान जहाज न पहुंचे पार॥ तट ही तट पर डोलै सोय। कारज सिद्ध तहां ही होय॥ तुम्हरी कीर्तिबेलि बहु बढ़ी। यत्न बिना जगमंडप चढ़ी॥ और कुदेव सुयश निजचहैं। प्रभु अपने थल ही यश लहैं॥ जगत जीव घूमैं विन ज्ञान। कीनौं मोहमहाविषपान॥ तुम सेवा विषनाशक जरी। यह मुनिजन मिलि निश्चय करी॥ जन्म-लता मिथ्यामत मूल। जनम मरण लागैं तहां फूल॥ सो कबहूं विन भक्ति कुठार। कटै नहीं दुखफलदातार॥ कल्पतरूवर चित्राबेलि, काम पोरषा (?) नवनिधि मेलि। चिंतामणि पारस पाषान, पुण्य पदारथ और महान॥ ये सब एक जन्म संजोग। किंचित

सुखदातार नियोग ॥ त्रिभुवननाथ तुम्हारी सेव। जन्म जन्म सुखदायक देव ॥ तुम जग-बांधव तुम जगतात । अशरण शरण विरद विख्यात। तुम सब जीवनके रखपाल। तुम दाता तुम परम दयाल। तुम पुनीत तुम पुरुष प्रधान। तुम समदर्शी तुम सब जान ॥ जय जिन यज्ञ पुरुष परमेश। तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेश ॥ तुम जगभर्ता तुम जगजान। स्वामि स्वयम्भू तुम अमलान ॥ तुम विन तीन काल तिहुं लोय। नाहीं शरण जीवको कोय ॥ यातैं अब करुणानिधि नाथ। तुम सम्मुख हम जोडैं हाथ ॥ जबलौं निकट होय निर्वान। जगनिवास छूटै दुखदान ॥ तबलौं तुम चरणांबुज वास। हम उर होउ यही अरदास ॥ और न कुछ वांछा भगवान। हो दयाल दीजे वरदान ॥

१९

श्रीपति जिनवर करुणायतनं, दुखहरन तुमारा बाना है। मत मेरी वार अबार करो, मोहि

देहु विमल कल्याना है ॥ टेक ॥ त्रैकालिक वस्तु प्रत्यच्छ लखो तुमसों कछु वात न छाना है । मेरे उर आरत जो वरतै निहचै सब सो तुम जाना है ॥ अवलोकि विथा मत मौन गहो नहिं मेरा कहीं ठिकाना है । हो राजिवलोचन सोचविमोचन, मैं तुमसो हित ठाना है ॥ श्री० ॥ सब ग्रन्थनिमें निरग्रंथनिने, निरधार यही गणधार कही । जिननायक ही सब लायक हैं, सुखदायक छायकज्ञानमही ॥ यह वात हमारे कान परी, तब आन तुमारी सरन गही । क्यों मेरी वार विलम्ब करो, जिननाथ कहो यह बात सही ॥ श्री० ॥ काहूको भोग मनोग करो काहूको स्वर्ग विमाना है । काहूको नाग नरेशपती, काहूको ऋद्धिनिधाना है । अब मोपर क्यों न कृपा करते, यह क्या अंधेर जमाना है ॥ इन्साफ करो मत देर करो, सुखवृंद भरो भगवाना है ॥ श्री० ॥ खल कर्म मुझे हैरान किया तब तुमसों आन पुकारा है । तुम हो समरत्थ

न न्याव करो, तब बंदेका क्या चारा है ॥ खलघालक पालक बालकका, नृप, नीति यही जग सारा है। तुम नीतिनिपुन त्रैलोकपती, तुम ही लगि दौर हमारा है॥ श्री० ॥ जबसे तुमसे पहिचान भई, तबसे तुम ही को माना है। तुमरे ही शासनका स्वामी !, हमको शरना सरधाना है ॥ जिनको तुम्हरी शरनागत्त है, तिनसौं जमराज डराना है। यह सुजस तुम्हारे सांचेका, जस गावत वेद पुराना है ॥ श्री० ॥ जिमने तुमसे दिलदर्द कहा, तिसका तुमने दुख हाना है। अघ छोटा मोटा नाशि तुरत, सुख दिया तिन्हें मनमाना है ॥ पावकसौं शीतल नीर किया, औ चीर बढा असमाना है। भोजन था जिसके पास नहीं, सो किया कुबेर समाना है॥ श्री० ॥ चिंतामन पारस कल्पतरू, सुखदायक ये परधाना है। तुव दासनके सब दास यही हमरे मनमें ठहराना है ॥ तुव भक्तनको सुरइंद्रपती, फिर

चक्रपती पद पाना है। क्या बात कहों विस्तार बडी, वे पावें मुक्ति ठिकाना है ॥ श्री० ॥ गति चार चौरासी लाखविषैं, चिन्मूरत मेरा भटका है। हो दीन बन्धु करुणानिधान, अब लों न मिटा वह खटका है। जब जोग मिला शिव-साधनका, तब विघनकर्मने हटका है ॥ तुम विघन हमारा दूर करो, प्रभु मोको आश तुमारा है ॥श्री०॥ गज ग्राहग्रसित उद्धार लिया, ज्यों अंजन तस्कर तारा है। ज्यों सागर गोपदरूप किया, मैनाका संकट टारा है ॥ ज्यों सूलीतैं सिंहासन औ बेडीको काट विडारा है। त्यों मेरा संकट दूर करो, प्रभु मोको आश तु-मारा है ॥श्री० ॥ ज्यों फाटक टेकत पांय खुला औ सांप सुमन करि डारा है। ज्यों खड्ग कुसुमका माल किया बालकका जह्र उतारा है ज्यों सेठ विपत चकचूर पूर, घर लछमी सुख विस्तारा है। त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु, मोको आश तमारा है ॥ श्री० ॥ जद्दपि तुमको

रागादि नहीं, यह सत्य सर्वथा जाना है। चिन-मूरत आप अनंत गुनी, नित शुद्ध दशा शिव-थाना है॥ तदपि भक्तनकी भीति हरो, सुख देत तिन्हें जु सुहाना है। यह शक्ति अचिंत तुम्हारीका, क्या पावै पार सयाना है॥ श्री०॥ दुखखंडन श्रीमुखमंडनका, तुमरा प्रन परम प्रमाना है। वरदान दया जस कीरतिका तिहुं-लोक धुजा फहराना है॥ कमलाधरजी! कम-लाकरजी! करिये कमला अमलाना है। अब मेरी विथा विलोक रमापति, रंच न वार लगाना है॥ श्री०॥ हो दीनानाथ अनाथहितू, जन दीन अनाथ पुकारी है। उदयागत कर्म विपाक हलाहल, मोह विथा विस्तारी है। ज्यों आप और भवि जीवनकी, तत्काल विथा निरवारी है। त्यों 'वृंदावन' यह अर्ज करै प्रभु, आज हमारी बारी है॥ श्री०॥

२०

हो दीनबंधु श्रीपति करुणानिधानजी!

यह मेरी विथा क्यों न हरो बार क्या लगी॥टेक॥ मालिक हो दो जहानके जिनराज आप ही। ऐबो हुनर हमारा तुमसे छिपा नहीं॥ बेजानमें गुनाह मुझसे बन गया सही। ककरीके चोरको कटार मारिये नहीं॥हो दीनबंधु०॥ दुखदर्द दिलका आपसे जिसने कहा सही। मुश्किल कहर बहरसे लिया है भुजा गही॥ जस वेद औ पुरानमें प्रमान है यही। आनंदकंद श्रीजिनंद देव है तुही॥ हो दीनबंधु०॥ हाथीपै चढी जाति थी सुलोचना सती। गंगामें ग्राहने गही गजरा-जकी गती॥ उस वक्तमें पुकार किया था तुम्हें सती। भय टारके उबार लिया हे कृपापती॥ हो दीनबंधु०॥पावक प्रचंड कुंडमें उमंड जब रहा सीतासे शपथ लेनेको तब रामने कहा॥ तुम ध्यान धार जानकी पग धारती तहां। तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कौंल लहलहा॥ हो दी०॥ जब चीर द्रोपदीका दुशासनने था गहा। सब ही सभाके लोग थे कहते हहा हहा॥ उस वक्त

भीर पीरमें तुमने करी सहा। परदा ढका सतीका सुजस जक्तमें रहा॥ हो दीनबंधु०॥ श्रीपालको सागरविषै जब सेठ गिराया। उनकी रमासे रमनेको आया वो वेहया॥ उस वक्तके संकटमें सती तुमको जो ध्याया। सुख-दंद फंद मेटके आनन्द बढाया॥ हो दीनबं०॥ हरिषेनकी माताको जहां सौत सताया। रथ जैनका तेरा चलै पीछै यों बताया॥ उस वक्तके अनसनमें सती तुमको जो ध्याया। चक्रीस हो सुत उसकेने रथ जैन चलाया॥ हो०॥ सम्यक्तशुद्ध शीलवती चंदना सती। जिसके नगीच लगती थी जाहिर रती रती॥ बेरीमें परी थी तुम्हें जब ध्यावती हती। तब वीर धीरने हरी दुखदंदकी गती। जब अंजना सतीको हुआ गर्भ उजारा। तब सासने कलंक लगा घरसे निकारा॥ वन वर्गके उपसर्गमें तब तुमको चितारा। प्रभुभक्त व्यक्त जानिके भय देव निवारा॥ हो०॥ सोमासे कहा जो तु सती

शील विशाला । तो कुंभतैं निकाल भला नाग
जु काला ॥ उस वक्त तुम्हें ध्यायके सती हाथ
ही डाला । तत्काल ही वह नाग हुआ फूलकी
माला ॥ हो० ॥ १० ॥ जब राजरोग था हुआ
श्रीपालराजको । मैना सती तब आपको पूजा
इलाजको ॥ तत्कालही सुंदर किया श्रीपाल-
राजको । वह राजरोग भाग गया मुक्तराजको
॥ हो० ॥ ११ ॥ जब सेठ सुदर्शनको मृषा दोष
लगाया । रानीके कहे भूपने सूलीपै चढाया ॥
उस वक्त तुम्हें सेठने निज ध्यानमें ध्याया ।
सूलीसे उतार उस्को सिंहासनपै बिठाया
॥ हो० ॥ १२ ॥ जब सेठ सुधन्नाजिको वापीमें
गिराया । ऊपरसे दुष्ट था उसे वह मारने
आया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने दिल अपनेमें
ध्याया । तत्काल ही जंजालसे तब उसको
बचाया ॥ हो० ॥ १३ ॥ एक सेठके घरमें
किया दारिद्रने डेरा । भोजनका ठिकाना भी
न था सांझ सबेरा ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने जब

ध्यानमें धारा। घर उसकेमें तव कर दिया लक्ष्मीका पसारा ॥ हो० ॥ १४ ॥ वलि वादमें मुनिराजसौं जब पार ना पाया। तव रातको तलवार ले शठ मारने आया। मुनिराजने निज ध्यानमें मन लीन लगाया। उस वक्त हो प्रतच्छ तहां देव वचाया ॥ हो० ॥ १५ ॥ जव रामने हनुमन्त को गढ लंक पठाया। सीताकी खवर लेनेको सहसैन्य सिधाया ॥ मग वीच दो मुनि-राजकी लख आगमें काया। झठ वार मूसल धारसे उपसर्ग बुझाया ॥ हो० ॥ १६ ॥ जिन नाथहीको माथ नवाता था उदारा। घेरेमें पडा था वह कुलिशकरण विचारा। उस वक्त तुम्हें प्रेमसे संकटमें उचारा। रघुवीरने सव पीर तहां तुरंत निवारा ॥ हो० ॥ १७ ॥ रण-पाल कुंवरके पडी थी पांवमें वेरी। उस वक्त तुम्हें ध्यानमें ध्याया था सवेरी ॥ तत्काल ही सुकुमारकी सव झड पडी वेरी। तुम राजकुं-वरकी सभी दुखदन्द निवेरी ॥ हो० ॥ १८ ॥

जब सेठके नन्दनको डसा नाग जु कारा। उस वक्त तुम्हें पीरमें धर धीर पुकारा॥ ततकाल ही उस बालका विष भूर उतारा। वह जाग उठा सोके मानों सेज सकारा। हो० ॥ १९ ॥

मुनिमानतुङ्गको दई जब भूपने पीरा। तालेमें किया बन्द भरी लोह जँजीरा॥ मुनिईशने आदीशकी स्तुति की है गभीरा। चक्रेश्वरी तब आनिके झट दूरकी पीरा॥ हो० ॥ २० ॥

शिवकोटिने हट था किया सामंतभद्रसों। शिवपिंडकी बन्दन करौ शंकौ अभद्रसों॥ उस वक्त स्वयंभू रचा गुरु भाव भद्रसों। जिनचन्दकी प्रतिमा तहां प्रगटी सुभद्रसों॥ हो० ॥

सूवेने तुम्हें आनके फल आम चढाया। मेंडक ले चला फूल भरा भक्तिका भाया। तुम दोनोंको अभिराम स्वर्ग धाम वसाया। हम आपसे दातारको लख आज ही पाया॥ हो० ॥ २२ ॥

कपि स्वान सिंह नेवल अज बैल बिचारे। तिर्यंच जिन्हें रंच न था बोध चितारे॥

इत्यादिको सुरधाम दे शिवधाममें धारे। हम आपसे दातारको प्रभु आज निहारे॥ हो०॥ तुम ही अनन्त जन्तुका भय भीर निवारा। वेदोपुराणमें गुरू गणधरने उचारा॥ हम आपकी शरणागतीमें आके पुकारा। तुम हो प्रतक्ष कल्पवृक्ष इच्छिताकारा॥ हो०॥ २४॥ प्रभु भक्त व्यक्त जक्त भक्त मुक्तके दानी। आनन्दकन्द वृन्दको हो मुक्तके दानी॥ मोह दीन जान दीनबन्धु पातक जानी। संसार विषम खार तार अन्तरजामी॥ हो०॥ २५॥ करुणानिधानवान हो अब क्यों न निहारो। दानी अनन्तदानके दाता हो संभारो॥ वृषचन्दनन्द वृन्दका उपसर्ग निवारो। संसार विषम खारसे प्रभु पार उतारो॥ हो दीनबन्धु श्रीपती करुणानिधान जी। अब मेरी व्यथा क्यों न हरो वार क्या लगी॥ २६॥

दोहा।

जासु धर्मपरभावसौं, संकट कटत अनंत।
मंगलमूरति देव सो, जैवंतौ अरहंत ॥ १ ॥
हे करुणानिधि सुजनको, कष्टविषै लखि लेत।
तजि विलंब दुख नष्ट किय, अब विलंब किह हेत ॥ २ ॥

षट्पद।

तव विलम्ब नहिं कियो, दियो नमिको रज-ताचल। तव विलंब नहिं कियो, मेघवाहन लंकाथल ॥ तव विलंब नहिं कियो, सेठ-सुत दारिद भंजे। तव विलंब नहिं कियो, नाग जुग सुरपद रंजे ॥ इहि चूरि भूरि दुख भक्तके, सुख पूरे शिवतियरवन। प्रभु मोर दुःखनाशनविषैं, अब विलम्बकारन कवन ॥ तव विलंब नहिं कियो, सिया पावक जल कीन्हौं। तव विलंब नहिं कियो, चंदना शृंखल छीन्हौं ॥ तव विलंब नहिं कियो, चीर द्रुपदीको बाढ्यौ।

तब-विलंव नाहिं कियो, सुलोचना गंगा काढ्यौ।
इमि चूरि भूरि दुख भक्तके, सुख पूरे शिवति-
यरवन। प्रभु मोर दुःखनाशनविषैं, अब विलंब
कारन कवन॥ तब विलंव नाहिं कियो, सांप किय
कुसुम सु माला। तब विलब नहिं कियो, उर्मिला
सुरथ निकाला॥ तब विलंब नहिं कियो, शील-
बल फाटक खुल्ले। तब विलंब नाहिं कियो,
अंजना वन मन फुल्ले॥ इमि चूरि भूरि दुख
भक्तके, सुख पूरे शिवतियरवन। प्रभु मोर
दुःखनाशनविषैं. अब विलंब कारन कवन॥
तब विलंब नहिं कियो, शेठ सिंहासन दीन्हौं।
तब विलंब नहिं कियो. सिंधु श्रीपाल कढीन्हौं॥
तब विलंब नहिं कियो. प्रतिज्ञा वज्रकर्ण पल।
तब विलम्ब नाहिं कियो. सुधन्ना काढि वापि
थल॥ इम चूरि भूरि दुख भक्तके. सुख पूरे
शिवतियरवन। प्रभु मोर दुःखनाशनविषैं.
अब विलम्ब कारन कवन॥ तब विलम्ब नाहिं
कियो. कंस भय त्रिजग उबारे। तब विलम्ब

नहिं कियो. कृष्णसुत शिला उतारे ॥ तब विलम्ब नहिं कियो. खड्ग मुनिराज बचायो । तब विलंब नहिं कियो. नीरमातंग उचायो ॥ इमि० ॥ प्रभु० ७ ॥ तब विलम्ब नहिं कियो. सेठ सुत निरविष कीन्हौं । तब विलम्ब नहिं कियो. मानतुंगबंध हरीन्हौं ॥ तब विलंब नहिं कियो . वादिमुनिकोढ मिटायो । तब विलंब नहिं कियो. कुमुद जिन पास मिटायो ॥ इमि० ॥ टेक ॥ ८ ॥ तब विलम्ब नहिं कियो. अंजना-चोर उबारे । तब विलम्ब नहिं कियो. पूरवा भील सुधारे ॥ तब विलम्ब नहिं कियो. गृद्ध-पक्षी सुंदर तन । तब विलंब नहिं कियो. भेक दिय सुर अद्भुत तन ॥ इमि० ॥ टेक ॥ ९ ॥ इहविधि दुखनिरवार. सारसुख प्रापति कीन्हौं । अपनो दास निहारि भक्तवत्सल गुन चीन्हौं ॥ अब विलम्ब किहि हेत. कृपा कर इहां लगाई । कहा सुनो अरदास नाहिं. त्रिभुवनके राई ॥ जनवृंद सुमनवचतन अबै. गही नाथ तुम पद

शरन। सुधि ले दयाल मम हालपै, कर मंगल मंगलकरन ॥ १० ॥

२२

जिनबचनस्तुति।

हो करुणासागर देव तुमी, निर्दोष तुमारा वाचा है। तुमरे वाचामें हे स्वामी, मेरा मन सांचा राचा है ॥ टेक ॥ बुधिकेवल अप्रतिछेद विषैं, सब लोकालोक समाना है। मनु ज्ञेय गरास विकाश अटंक, झलाझल जोत जगाना है। सर्वज्ञ तुमी सब व्यापक हो, निरदोश दगा अमलाना है। यह लच्छन श्रीअरहंत विना-नहिं और कहीं ठहराना है ॥ हो करु० ॥ धर्मा-दिक पंच वसैं जहं लौं, वह लोकाकाश कहावै है। तिस आगैं केवल एक अनंत, अलोका-काश रहावै है ॥ अवकाश अकाशविषैं गति ओ, थिति धर्म अधर्म सुभावै है। परिवर्तन लच्छन काल धरै, गुणद्रव्य जिनागम गावै है ॥ हो करु० ॥ इक जीव ओ धर्माधर्म दरब ये

मध्य असंख्यप्रदेशी है। आकाश अनंतप्रदेशी है, ब्रहमंड अखंड अलेशी है। पुग्गलकी एक प्रमाणू सो, यद्यपि वह एकप्रदेशी है। मिलने की सकाति स्वभावीसौं, होती बहु खंध सुलेशी है॥ हो करु० ॥ कालाणू भिन्न असंख अणू, मिलनेकी शक्ति न धारा है। तिसतैं कायाकी गिनतीमें, नहिं काल दरबको धारा है॥ हैं स्वयंसिद्ध षटद्रव्य यही, इनहीका सर्व पसारा है। निर्बाध जथारथ लच्छन इनका, जिनशासनमें सारा है॥ हो करु० ॥ सब जीव अनंत प्रमाण कहे, पन लच्छन ज्ञायकवंता है तिसतैं जड पुग्गल मूरतकी, है वर्गणरास अनंता है॥ तिसतैं सब भावियकाल समयकी, रास अनंत भनंता है। यह भेद सुभेदविज्ञान विना, क्या औरनको दरसंता है॥ हो० ॥ इक पुग्गलकी अविभाग अणू, जितने नभमें थिति कीना जी। तितनेमहँ पुग्गल जीव अनंत, वसैं धर्मादि अछीना जी॥ अवगाहन शक्ति

विचित्र यही, नभकी वरनी परवीना जी ।
इसही विधिसों सब द्रव्यनिमें, गुन शक्ति वसै
अनकीना जी ॥ हो० ॥ इक काल अणूपरतें
दुतियेपर, जाति जवै गत मंदी है । इक पुग्ग-
लकी अविभाग अणू सो समय कही निरद्वंदी है ॥
इसतैं नहिं सूच्छमकाल कोई, निरअंश समय
यह छंदी है । यातैं सब कालप्रमान बंधा, वरनी
श्रुति जैति जिनंदी है ॥ हो० ॥ जब पुग्गलकी
अविभाग अणू, अतिशीघ्र उताल चलानी है ।
इक समयमाहिं सो चौदह राजू, जात चली पर-
मानी है ॥ परसै तहँ सर्वपदारथको, क्रमसौं
यह भेद विधानी है । नहिं अंश समयका होत
तहां यह गतिकी शक्ति वखानी है ॥ हो० ॥
गुन द्रव्यनिके आधार रहैं, गुनमें गुन और
न राजै है । न किसी गुनसों गुन और मिलैं,
यह और विलच्छनता जै है ॥ ध्रुव वै उतपाद
सुभाव लिये, तिरकाल अबाधित छाजै है । षट
हानि रु वृद्धि सदीव करै, जिनवैन सुनै भ्रम

भाजे है ॥ हो० ॥ जिम सागरवीच कलोल उठी, सो सागरमाहिं समानी है। परजे करि सर्व पदारथमें तिमि, हानि रु वृद्धि उठानी है॥ जब शुद्ध दरवपर दृष्टि धरें, तब भेदविकल्प नशानी है। नयन्यासनतैं वहु भेद सु तो, पर मान लिये परमानी है ॥ हो० ॥ जितने जिन-बैनके मारग हैं, तितने नयभेद विभाखा है। एकांतकी पच्छ मिथ्यात वही, अनेकांत गहैं सुखसाखा है ॥ परमागम है सर्वंग पदारथ नय इकदेशी भाषा है। यह नय परमान जिनागम साधित, सिद्ध कैर अभिलाषा है ॥ हो० १२ ॥ चिन्मूरतके परदेशप्रती. गुन है सु अनंत अनंता जी। न मिलैं गुन आपुसमें कबहूं, सत्ता निज भिन्न धरंता जी ॥ सत्ता चिनमूरतकी स्ववमें. सब काल सदा वरतंता जी। यह वस्तु सुभाव जथारथको. जिय सम्यक्वंत लखंता जी ॥ हो० ॥ सविरोध विरोधविवर्जित धर्म धरैं सब वस्तु विराजै है। जहं भाव तहां सु

अभाव वसै. इन आदि अनंत सु छाजै है ॥
निरपेच्छित सो न सधै कबहूं. सापेक्षा सिद्ध
समाजै है। यह अनेकांतसों कथन मथन कारि
स्यादवाद धुनि गाजै है ॥ हो० ॥ जिस काल
कथंचित अस्ति कही, तिस काल कथंचित
नाहीं है। उभयतसरूप कथंचित सो, निरवाच
कथंचित नाहीं है ॥ पुनि अस्ति अवाच्य
कथंचित त्यों, वह नास्ति अवाच्य कथाही है ॥
उभयातमरूप अकथ्य कथंचित, एक ही काल
सुमाही है ॥ हो० ॥ यह सात सुभंग सुभाव-
मयी, सब वस्तु अभंग सुसाधा है। परवादि
विजय करिवे कहं श्रीगुरु, स्यादहिवाद अराधा
है ॥ सरवज्ञमतच्छ परोच्छ यही, इतनो इत
भेद अबाधा है। 'वृन्दावन' सेवत स्यादहिवाद
कटै जिसतैं भवबाधा है ॥ हो करुणासागर
देव तुमी, निर्दोष तुमारा वाचा है। तुमरे
वाचामें हे स्वामी, मेरा मन सांचा राचा है ॥

२३

दोहा ।

सहज शुद्ध ज्ञायक सकल, सकल गुनानिकर युक्त
निर्विकार निर्दुंदमय, बंदों जिन विधिमुक्त ॥

पद्धडी छंद ।

जय त्रिभुवन नायक त्रिजगईस । जय करण-
कुरंगनको मृगीस ॥ जय मोहशैलविध्वंसकार ।
जय जगतशिरोमणि स्वच्छचार ॥ जय अनु-
पम अद्भुत सुगुणधार । जय धर्मपोत जगजि-
यउधार ॥ जय चरण शुद्ध अवलंब लंब । जय
बोधशुद्ध प्रतिबिंब बिंब ॥ जय एनमुक्त तुम
उक्त उक्त । जय क्रांत भार अति युक्त युक्त ॥
जय नष्ट अष्ट गुण अष्ट पुष्ट । जय जंतु तुष्ट
अति सुष्ट सुष्ट ॥ जय मानमदोद्धतकरी तंग ।
जय मीनकेतमद किमपि भंग ॥ जय कर्मभर्म
भानौ प्रवीन । जय मर्मज्ञान ज्ञाता कहीन ॥ जय
शुद्धातम प्रतिबोधबोध । जय आस्रवभाव
निरोधरोध ॥ जय प्रबलजालजग चूर चूर । जय

आस जगतकी पूरपूर ॥ जय भूलधूलनासन समीर। जय स्वातमरसफलभोगकीर ॥ जय विदितसप्ततत्वार्थअर्थ। जय सुगतिगमन चिंत-चिंतव्यर्थ ॥ जय लब्धिनवींपूरित पुनीत। जय ज्ञानांबुधिभासक सुनीत ॥ जय नंतचतुष्टय इष्ट अंग। जय चतुकचमूविधिसंगभंग ॥ जय सम वसर्नलक्ष्मीनिवास। जय प्रातिहार्य वसुजुत विभास ॥ जय कल्पवेल वांछक सुदैन। जय चिंतामणि मनचिंत लैन ॥ जय जगभूरुहनासन-कुठार। जय भविजनचातकवारिधार ॥ जय मलिनकलिलकालिमपखाल। जय मुखअरविंद अधरप्रवाल ॥ जय पुरहुत सुर नर नागईस। जय नाय माथ ध्यावत मुनीस ॥ जय आनंद-कंदउदोतसूर। जय तारणतरण तरंड भूर ॥ जय सबविधिलायक तुम दयाल। जय मोहन-मूरति सृष्टिपाल ॥ जय जीवनमूल समूलमंत्र ॥ जय अधमउधारक भूमितंत्र ॥ जय तापतस-जग-इंदुअंस। जय आरत रुद्र उडाय वंस ॥

जय जग अनाथ तुम नाथ कौन । जय अमल अचल चिद्रूप चीन ॥ नहिं चाह नाथ कछु और मोय । हे दीनदयाल कृपाल होय ॥ कर जोर जुगल विनती विथार ॥ संसार–खार–दुख–चार तार ॥

दोहा ।

दुख भंजन रंजन भविक, अंजन भंजन त्यागि
गंजन गर्भ अरीनके, नमै 'चंद' पद लागि ॥

२४

गुरु–अष्टक ।

कवित्त ३१ मात्रा ।

संघसहित श्रीकुंदकुंद गुरु, बंदन हेत गये गिरनार । वाद परो तहं संशयमतिसों, साक्षी वदी अंबिकाकार ॥ 'सत्य पंथ निरग्रंथ दिगंबर' कही सुरी तहं प्रगट पुकार । सो गुरुदेव वसौ उर मेरे, विघ्न हरण मंगल करतार ॥ १ ॥
स्वामि समंतभद्र मुनिवरसों, शिवकोटी हठ

कियौ अपार। वंदन करौ शंभुपिंडीको, तब गुरु रच्यौ स्वयंभू भार॥ वंदन करत पिंडिका फाटी, प्रगट भये जिनचंद्र उदार। सो० ॥ २॥ श्रीअकलंकदेव मुनिवरसौं, वाद रच्यौ जहं बौद्ध विचार। तारा देवी घटमें थापी, पटके ओट करत उच्चार॥ जीत्यौ स्याद्वादबल मुनिवर, बौद्धबोध तारामदटार। सो० ॥ ३॥ श्रीमत विद्यानंदि जबै, श्रीदेवागम थुति सुनी सुधार। अर्थहेत पहुंचौ जिनमंदिर, मिलौ अर्थ तहं सुखदातार॥ तब व्रत परम दिगम्बरको धर. परमतको कीनो परिहार॥ सो० ॥ ४॥ श्रीमत मानतुंग मुनिवरपर, भूप कोप जब कियौ गंवार। बंद कियौ तालेमें तबही. भक्तामर गुरु रच्यौ उदार॥ चक्रेश्वरी प्रगट तब ह्वैके. बंधन काट कियौ जयकार। सो० ॥ ५॥ श्रीमतवादिराज मुनिवरसौं. कह्यौ कुष्ठ भूपति जिहंबार। श्रावक सेठ कह्यौ तिहं अवसर, मेरे गुरु कंचनतन धार॥ तबही एकीभाव रच्यौ

गुरु, तन सुवर्णदुति भयौ अपार ॥ सो० ॥ ६ ॥
श्रीमत कुमुदचंद्र मुनिवरसौं. वाद परौ जहं
सभामंझार । तबही श्रीकल्यानधाम थुति,
श्रीगुरु रचनारची अपार ॥ तब प्रतिमा श्रीपा-
र्श्वनाथकी. प्रगट भई त्रिभुवन जयकार । सो० ॥
श्रीमत अभयचंद्र गुरुसौं जब, दिल्लीपति इमि
कही पुकार । कै तुम मोहि दिखावहु अतिशय.
कै पकरौ मेरो मत सार ॥ तब गुरु प्रगट अ-
लौकिक अतिशय, तुरत हरौ ताको मदभार ।
सो गुरुदेव बसौ उर मेरे. विघन हरण मंगल
करतार ॥ ८ ॥

दोहा ।

विघन हरण मंगलकरण. वांछित फलदातार
वृंदावन अष्टक रच्यौ. करौ कंठ सुखकार ॥

इति गुरु-अष्टक ।

२५

प्रकीर्णक ।

माधवी छन्द ।

रविसे रविसेन अचारज हैं. भविवारिजके विकसावन हारे । जिन पद्मपुरान बखान कियौ. भवसागरतैं जग जन्तु उधारे ॥ सियराम कथा सु जथारज भाखि. मिथ्यात समूह समस्त विदारे । भवि वृंद विथा अब क्यों न हरौ. गुरुदेव तुम्हीं मम प्रान अधारे ॥ १ ॥

भगवज्जिनसेन कविंद नमों. जिन आदि जिनिंदके छंद सुधारे । प्रथमानुसुवेद निवेदनमें, जिनकौ परधान प्रमान उचारे ॥ जगमें मुद मंगल भूरि भरे. दुख दूर करे भवसागर तारे । भवि वृंद विथा अब क्यों न हरौ. गुरुदेव तुम्हीं मम प्रान अधारे ॥ २ ॥

अशोकपुष्पमंजरी छंद ।

जासके मुखारविंदतैं प्रकास भास वृंद,
स्यादवाद जैन वैन इंदु कुन्दकुन्दसे ।

तासके अभ्यासतैं विकास भेद-ज्ञान होत,
मूढ सो लखै नहीं कुबुद्धि कुंदकुन्दसे ॥
देत हैं असीस सीस नाय इंद चंद जाहि,
मोह-मार-खंड मारतंड कुन्दकुन्दसे ।
सुद्ध बुद्धि वृद्धिदा प्रसिद्ध रिद्धि सिद्धिदा,
हुए न हैं न होंहिंगे मुनिंद कुन्दकुन्दसे ॥ ३॥

——:०.——

अथ शारदाष्टक लिख्यते.

वस्तु छंद ।

नमों केवल नमों केवल रूप भगवान ।
मुख ओंकारधुनि सुनि अर्थ गणधर विचारै ॥
रचि आगम उपदिशै भविक जीव संशय निवारै
सो सत्यारथ शारदा, तासु भक्ति उर आन ।
छंद भुजंगप्रयातमैं, अष्टक कहौं बखान ॥ १॥

भुजंगप्रयात ।

जिनादेशजाता जिनेन्द्रा विख्याता ।
विशुद्धप्रबुद्धा नमों लोकमाता ॥
दुराचार दुर्नैहरी शंकरानी ।
नमों देवि वागेश्वरी जैनवानी ॥ १ ॥

सुधाधर्मसंसाधनी धर्मशाला ।
सुधातापनिर्नाशनी मेघमाला ॥
माहामोहविध्वंसनी मोक्षदानी ।
नमों देवि वागेश्वरी जैनवानी ॥ २ ॥
अखैवृक्षशाखा व्यतीताभिलाषा ।
कथा संस्कृता प्राकृता देशभाषा ॥
चिदानन्द–भूपालकी राजधानी ।
नमों देवि वागेश्वरी जैनवानी ॥ ३ ॥
समाधानरूपा अनूपा अछुद्रा ।
अनेकान्तधा स्यादवादांकमुद्रा ॥
त्रिधा सप्तधा द्वादशांगी वखानी ।
नमों देवि वागेश्वरी जैनवानी ॥ ४ ॥
अकोपा अमाना अदंभा अलोभा ।
श्रुतज्ञानरूपी मतिज्ञानशोभा ॥
महापावनी भावना भव्यमानी ।
नमों देवि वागेश्वरी जैनवानी ॥ ५ ॥
अतीता अजीता सदा निर्विकारा ।
विषैवाटिकाखंडिनी खड्गधारा ॥

पुरापापविक्षेपकर्त्री कृपाणी ।
नमों देवि वागेश्वरी जैनवानी ॥ ६ ॥
अगाधा अबाधा निरंध्रा निराशा ।
अनन्ता अनादीश्वरी कर्मनाशा ॥
निशंका निरंका चिदंका भवानी ।
नमों देवि वागेश्वरी जैनवानी ॥ ७ ॥
अशोका मुदेका विवेका विधानी ।
जगज्जन्तुमित्रा विचित्रावसानी ॥
समस्तावलोका निरस्तानिदानी ।
नमों देवि वागेश्वरी जैनवानी ॥ ८ ॥

वस्तु छंद ।

जैनवाणी जैनवाणी सुनहिं जे जीव ।
जे आगम रुचिधरें जे प्रतीति मन माहिं आनहि
अवधारहिं जे पुरुष समर्थ पद अर्थ जानहि ॥
जे हितहेतु 'बनारसी' देहिं धर्म उपदेश ।
ते सब पावहिं परम सुख, तज संसार कलेश ॥

इतिशारदाष्टक ।